इतिहास लेखन–उदय व विकास की धाराएँ

*ललित कुमार पंवार

शोध सारांश

अतीत के जिन वृत्तों के अस्तित्व को हम पुर्ण विश्वास के साथ प्रमाणित कर सके उन्हें इतिहास की श्रेणी में रखा जा सकता है। आधुनिकता के दौर में इतिहास के इन वृत्तों के पीछे कारण– श्रृंखला और परिणाम– श्रृंखला को भी सम्मिलित किया जाता है। इन्हीं वृतांतों को जब लिपिबद्ध किया जाता हैं तो इतिहास लेखन कहलाता है।

इतिहास लेखन को समझने के लिए यह जरूरी होगा कि हम इतिहास दर्शन और अब तक इतिहास लेखन पर हुए चिंतन पर एक विहंगम दृष्टि डाले। भारतीय परमपरा के अनुसार इतिहास संस्कृत शब्द हैं लेकिन मेक्समूलर ने इसे जर्मन शब्द बताया। भारत में इतिहास लेखन वेदों से प्रारम्भ माना जाता है।

वास्तव में इतिहास लेखन की शुरूआत हमें युनान के हेरोडाटस और श्रुसीदीदस ;पॉचवी सदी ईसा पूर्वद्ध से माननी चाहिए इन्होनें अपने इतिहास में मनुष्य के कार्यो को देशकाल में स्थित करना शुरू किया और इतिहास लेखन का प्रारम्भिक दौर शुरू हुआ। इन्हीं दोनों इतिहासकारों ने सूचनाओं पर यथावत विश्वास कर और तथ्यों की जॉच कर पैनी दृष्टि से इतिहास लेखन प्रारम्भ किया। हालांकि ये भी गाथाओं व मिथिकों से पूरी तरह मुक्त नहीं हो सके थे।

ईसा की प्रारम्भिक शताब्दियों में यूनान का पतन हो रहा था इतिहास लेखन की महत्ता समाप्त सी हो रही थी ईसाई धर्म के प्रचार प्रसार में समाज का धर्म प्रधान बनाना शुरू किया और समय की धारा के अनुकुल ही संत आगस्टाइन ने इतिहास में ईश्वर को स्थापित कर दिया और शताब्दियों तक ऐसा ही इतिहास लिखा जाता रहा जो कैथोलिक चर्च की सत्ता की प्रतिष्ठा और स्थायित्व बनाये रखने में सहायक हो।

इसी प्रकार लेखन में परिवर्तनता के संकेत दृष्टिगोचर होने लगे और चौदहवीं शताब्दी में अफ्रीका के विलक्षण इतिहासकार इब्नखल्दून (1332.1406) ने न सिर्फ इतिहास लेखन किया। वरन् लेखन की विधि और दर्शन पर भी विचार किया और भौतिक – परिवेश व सामाजिक संस्थाओं के महत्व को समझकर इतिहास को साहित्य से अलग रखते हुए उसने साधारण के माध्यम से विशिष्ट की व्याख्या करने का तरीका अपनाया और इतिहास में वैज्ञानिक दृष्टिकोण को स्थान दिया।

तत्पश्चात् पुनर्जागरण काल से विधिवत वैज्ञानिक इतिहास लेखन प्रारम्भ हुआ। जिसमें वाल्तेयर, माटेस्कयू, मैकियावली जैसे विचारकों ने इतिहास लेखन को लौकिक आधार प्रदान करते हुए समाज व सभ्यता के विचारों को महत्व देते हुए मानव मात्र की समानता व प्रगति का सिद्धांत प्रतिष्ठित किया जिससे इतिहास तर्क संगत होने लगा।

भारत के संदर्भ में इतिहास लेखन में प्रायः यह कहा जाता हैं कि भारतीयों में इतिहास बोध बिल्कुल नहीं होता जिसका प्रमुख कारण भारतीयों की तटस्थता, निरपेक्षता, अध्यात्म व शाश्वत के प्रति लगाव और लौकिकता को महत्व देना था और इतिहास का आधार को क्रमबद्ध घटनाएँ ही हो सकती है। इसलिए इतिहास लेखन व दर्शन के प्रति भारतीयों की सजगता का कल्हण के पहले कोई प्रमाण नहीं मिलता।

12 वीं शताब्दी में कल्हण ने राजतरंगिनी को आठ भागों में रचित कर अपने निम्न उद्देश्यों दृष्टिगोचर किये–पुराने राजवंशों की जानकारी देना, पाठकों का मनोरंजन करना और अतीत से शिक्षा लेना।

सल्तनत काल में तो दरबारी इतिहास लेखन प्रारम्भ हो चुका था लेकिन मिनहाज, बरनी, बदॉयूनी, खाफी खॉ, फरिश्ता, अबुल फजल, आदि के ग्रंथों में राजा, दरबार, युद्ध व षडयंत्रों का ज्यादा जिक्र हुआ है। किवदंतियों, प्रशस्तियों, अफवाहों और इतिहास लेखन की खिचड़ी पकाई गई हैं। इनके सहारे यदि कोई तस्वीर खिचना चाहे तो वह कभी पुरी नहीं होगी।

16 वीं शताब्दीी से तो यूरापेयी मिशनरियों, यात्रियों, व्यापारियों के भारत आगागमन से और ब्रिटिश साम्राज्य स्थापित होने से एलफिस्ंटन, इरविन, विल्किंस, मैक्समूलर इत्यादि लोगों ने भारतीय साहित्य व विद्याओं की धूम पूरे विश्व में मचा दी।

19 वीं शताब्दी में मध्य से भारतीय इतिहासकारों यथा रविन्द्रनाथ, कौशाम्बी, केशवचन्द्र, अरविंदों, जायसवाल, शिबलीनूमानी, रायचौधरी, मुखर्जी, ओझा आदि ने भारत के अतीत की भूरि–भूरि प्रशंसा में लेखन प्रारम्भ किया और राष्ट्वादि विचारधारा तथा देश प्रेम व तत्कालीन स्थितियों को लेखन में स्थान दिया।

भारतीय इतिहास लेखन की धाराऍं

आज अपने ;भारतीयद्ध इतिहास लेखन में तीन प्रमुख धाराऍं दिखाई पड़ती हैं।

1. राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में राष्ट्रवादी लेखन
2. सार्वभौमिक व सर्वतोमुखी लेखन
3. भौतिकवादी दृष्टिकोण से लेखन

इतिहास की राष्ट्रवादी प्रवृति स्वाभाविक थी इसमें इतिहासकार देशभक्ति का जामा पहनकर देशप्रेम व स्व को पहचान कर उसके विकास में सहायक, लेखन शैली इजाद की और भारत की अन्तनिर्हित एकता को रेखांकित करने के उत्साह में उसकी विविधता व विभिन्नता को सायास नजरअंदाज किया गया।

इसी प्रवृति का एक सूक्ष्म सत्य भी था कि मध्यम वर्ग नये भारत का अलमबरदार वर्ग बना क्योंकि ज्यादातर इतिहासकार मध्यम वर्ग से ही थे।

यह प्रवृति राष्ट्रीय आंदोलन की परिणति तक स्वाभाविक हो सकती थी पर आजादी के बाद इतिहासकारों ने इसे जारी रखा जो उचित नहीं था, जो होशियार थे उन्होने विचारों को नया मोड देना शुरू किया और वक्त के साथ–साथ चलने का श्रेय भी प्राप्त कर लिया।

सार्वभौमिक लेखन का ऐतिहासिक आधार था अंग्रेजी राज, – ने शनै–शनै भारत को राजनैतिक रूप दिया तथा भारत की शिक्षा, रीति–निति व प्रशासन पर अंग्रेजी व अन्तराष्ट्रीय प्रभाव था।

दूसरी ओर आत्मकेन्द्रीत भारतीयों ने अपने सांस्कृतिक व साहित्यिक दायरे को विस्तृत किया तो एक सार्वभौमिक लेखन की प्रवृति का प्रादुर्भाव हुआ। लेकिन अंग्रेज भारतीय इतिहास का वहीं पक्ष उजाकर करते जिससे उनके साम्राज्य को लाभ हो, अतः ऐसे इतिहास लेखन में जनता प्रायः अनुपस्थित ही रहती थी और आम लोगो के तौर तरीको, जीवन– व्यवहार, रहन–सहन, घर–द्वार, तीज–त्यौहार, तथा सोच–विचार से पाठक अनभिज्ञ ही रहा जाता हैं। इस तरह सामान्य जन जीवन से रिक्त इतिहास तो अपूर्ण ही होगा, और इसी धरातल पर इतिहास लेखन की तीसरी प्रवृति उदित होती है।

:ज्यों–ज्यों भारतीय इतिहासकार खोज की सीमा पार कर चिंतन विश्लेषण की ओर बढ रहा है, ऐसी स्थिति में मानव सभ्यता की विकास प्रक्रिया के लिए जिम्मेदार तत्वों की तलाश में मध्यमवर्गीय चेतना का इतिहासकार भी उत्पादन और वर्गसंघर्ष के महत्व को समझता जा रहा है और सहीं प्रवृति– द्वन्द्वात्मक व्याख्या प्रकृति से मानव समाज तक हर क्षैत्र में वैज्ञानिक सिद्ध हो चुकी है। इसी लेखन प्रवृति में इतिहास को आदमी, उसके सामाजिक– आर्थिक अस्तित्व और संघर्ष से जोड़कर देखने की उत्साहवर्धक परम्परा शुरू हो चुकी है।

संक्षेप में यहीं कहा जा सकता हैं कि इतिहास की भौतिकवादी व्याख्या ने एक ऐसी पद्धति प्रदान की हैं जिसके माध्यम से मनुष्य के ज्ञान द्वारा अस्तित्व को समझने से स्थान पर उसके अस्तित्व के माध्यम से उसके ज्ञान को समझा जा सकता हैं।

अन्ततः आजकल भारतवर्ष में इतिहास लेखन और जो कुछ लिखा गया हैं, उसके पुनर्लेखन की एक साथ बात की जा रही है। जहॉ जाति, धर्म व राष्ट्र के नाम पर अनेक ग्रंथिया बनी हैं, पूर्वाग्रह संजोए गये हैं, इतिहास बोध और इतिहास दृष्टि का अभाव रहा हैं जहॉ न इतिहास लेखन की स्वस्थ और वैज्ञानिक परम्परा का प्रारम्भ हुआ है, जहॉ न इतिहास को प्रांसगिक समझा जाता हैं न इतिहासकार कों, और इसलिए दोनों को उचित प्रतिष्ठा प्राप्त नहीं हैं, वहॉ इतिहास को सही परिप्रेक्ष्य में स्थापित करने, उसे उपयोगी और प्रासंगिक बनाने, या यू कहे कि इतिहास को सही स्थान दिलाने के लिए जरूरी हैं कि वैज्ञानिक शोध प्रणाली, व्यापक सैद्धान्तिक तैयारी सामान्य जन से सहज और जागरूक जुडाव के आधार पर जनता का, जनता के लिए इतिहास लिखा जाए।

***सहायक आचार्य**
इतिहास विभाग
जय नारायण व्यास विश्वविद्यालय,
जोधपुर (राज.)

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. दत्त बी.एन. – स्टडीज इन इंडियन सोशियल पोलिटी (कोलकत्ता 1944)
2. घोष ए. – एन इनसाइक्लोपीडिया ऑफ इंडियन आर्कियोललाजी (दिल्ली 1989)
3. कोशाम्बी डी.डी. – एनइंट्रोडक्शन टु द स्टडी ऑफ इंउियनविद ए कामेन्ट्री बाय (बाम्बे 1956)
4. रायचौधरी एच.सी. – पालिटिलि हिस्ट्री ऑफ एंशियटं इंडियनविद ए कामेन्ट्री बाय बी.एन.मुखर्जी (दिल्ली 1997)
5. वर्मा लाल बहादुर – इतिहास का अतीत
6. चौबे झाडखण्ड – इतिहास का अतीत
7. मिनहाज – तबकात ए नासिरी (सल्तनतकाल दिल्ली)
8. अबुल फजल – अकबरनामा व आइने अकबरी
9. दत्त आर.सी. – द इकनोमिक हिस्ट्री ऑफ इंडिया
10. कल्हण – राजतरंगिनी